सिनेमा व रंगमंच लेखन एवं विन्यास में निर्देशक की भूमिका व अंत:संबंध

डॉ. अश्विनी कुमार

सारांश

निर्देशक का नाट्यप्रस्तुति व फ़िल्म निर्माण के सभी चरणो में सक्रिय और अति-विशिष्ट भूमिका होती है। नाट्य प्रस्तुति/ फ़िल्म निर्माण कई अवयवो से मिलकर तैयार होती है। ये अवयव बिखरे हुए होते हैं। निर्देशक इन सभी अवयवो को समायोजित कर एक विविधतापूर्ण एकात्मता वाला नाट्य प्रस्तुति या सिनेमा दर्शकों के सामने लाता है।

मुख्य शब्द

सिनेमा

रंगमंच

निर्देशन

निर्देशक

निर्देशक का शाब्दिक अर्थ होता है दिशा देने वाला। क्या हुआ है, क्या करना है आदि की सूचना, आदेश अथवा निर्देश देने वाला। सिनेमा और रंगमंच दोनों ही माध्यमों में निर्देशक सबसे प्रमुख होता है। दोनों ही माध्यमों में अनेक कलाओं का समावेश रहता है जिन्हें समन्वित रूप से इस प्रकार प्रस्तुत करना होता है कि प्रस्तुति का ही एक अनिवार्य अंग लगें।रमेश राजहंस लिखते हैं कि नेमिचंद्र जैन ने भी रंगदर्शन नामक अपनी पुस्तक में कहा है कि –

"निर्देशन ही वह केंद्रीय सूत्र है, जो नाट्य प्रदर्शन के विभिन्न तत्वों को पिरोता है और उनकी समग्रता को एक समन्वित बल्कि सर्वथा स्वतंत्र कला-रूप का दर्जा देता है।"

इस सामूहिक कला का परिणाम समूह सहभागिता से ही संभव हो पता है और प्रस्तुति के लिए अपेक्षित समूह का नेतृत्वकर्ता निर्देशक ही होता है।प्रस्तुति निर्माण प्रक्रिया के आरंभ से प्रस्तुति निर्माण तक निर्देशक की उपस्थिति दोनों ही माध्यमों अनिवार्य रहती है। अतः स्पष्ट होता है कि नेतृत्व क्षमता निर्देशन के लिए सर्वाधिक आवश्यक गुण है जिसके प्रभाव से वह टीम वर्क सुचारू रूप से कर पाता है। नेतृत्व क्षमता के अतिरिक्त कुलदीप सिन्हा ने अपनी पुस्तक फ़िल्म निर्देशन में निर्देशक बनने के लिए कुछ और गुणों को अत्यंत आवश्यक माना है। वो लिखते हैं कि –

"फ़िल्म निर्देशक बनने के लिए किसी व्यक्ति में इन गुणों का होना अत्यंत आवश्यक है –

1| कल्पना शक्ति; 2। रचनात्मक प्रतिभा; 3। अभिव्यक्ति; 4। दृढ़ निश्चय।"

उपरोक्त गुण दोनों ही विधाओं में निर्देशन करने हेतु आवश्यक है। दोनों माध्यम अपने निर्माण प्रक्रिया में अत्यंत भिन्न हैं। परिणाम स्वरुप दोनों माध्यमों की निर्देशकीय अपेक्षाएं अलग-अलग होना लाज़मी है।यह कहने और सुनने में आता है कि फ़िल्म निर्देशक का और नाटक अभिनेता का माध्यम है परंतु दोनों ही विधाओं में निर्देशक की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है।फ़िल्म एवं नाटक दोनों अलग-अलग विधाएं होते हुए भी दोनों में कई समानताएं हैं।जिस प्रकार नाटक का मंच एक फ्रेम की तरह कार्य करता है ठीक उसी प्रकार सिनेमा का पर्दा एक फ्रेम की तरह ही कार्य करता है जिसके अंदर कई घटकों से मिलकर एक कहानी जीवंत होती है।इसी प्रकार दोनों विधाओं के निर्देशन में भी अंतःसंबंध दिखाई

पड़ताहैं।

फ़िल्म एवं नाटक दोनों विधाओं के निर्देशन में अंतःसंबंध पर चर्चा करने से पहले दोनों विधाओं की प्रक्रिया एवं निर्देशक की भूमिका पर चर्चा करना आवश्यक है।जिससे दोनों माध्यमों में निर्देशन कौशल के विविध पक्षों के अंतःसंबंधों की पड़ताल की जा सके.

सर्वप्रथम हम फ़िल्म व नाटक की निर्माण की प्रक्रिया पर चर्चा करतें हैं।

अगर गौर से देखा जाये तो फ़िल्म और नाटक निर्माण की प्रक्रिया में कई पक्ष समान रूप से शामिल हैं और एक-दोनों में गहरा संबंध प्रतीत होता है। अतः अगर हम चाहें तो नाटक की निर्माण प्रक्रिया को फ़िल्म निर्माण प्रक्रिया की तरह ही विभाजित कर सकते हैं। विकास (Development), पूर्व निर्माण (Pre Production), निर्माण (Production), वितरण (Distribution)। लेकिन यहाँ पर इनका क्रम बदलना होगा। यही बदलाव नाटक और फ़िल्म को एक दूसरे से अलग करता है। विकास और पूर्व निर्माण की प्रक्रिया फ़िल्म और नाटक दोनों में एक रूप में समान होती है लेकिन निर्माण, पश्चात निर्माण और वितरण का क्रम बदल जाता है। यहाँ वितरण का चरण निर्माण व पश्चात निर्माण के पहले आ जाता है और निर्माण व पश्चात निर्माण की प्रक्रिया में होने वाले कार्य दोनों प्रस्तुति के साथ चलते हैं। इस क्रम को बदल कर निम्नलिखित क्रमानुसार लिखा जा सकता है-

- विकास (Development)
- पूर्व निर्माण (Pre Production)
- वितरण (Distribution)
- प्रस्तुति [निर्माण (Production) पश्चात निर्माण (Post Production)]

इस प्रकार फ़िल्म और नाटक निर्माण की प्रक्रियाएं कुछ विभिन्नताएं व समानताएं लिए हुए हैं। ठीक इसी प्रकार फ़िल्म और नाटक में निर्देशक भूमिका भी इसी तरह विभिन्नताएं व समानताएं लिए हुए है। हम यहां पर फ़िल्म और नाटक की निर्माण प्रक्रिया में निर्देशनमें अंतःसंबंध की चर्चा करेंगे।

विकास की प्रक्रिया फ़िल्म और नाटक में समान होती है और निर्देशक की भूमिका भी।फ़िल्म में अगर शुरुआत से देखा जाए तो विचार को कहानी में बदला जाता है और कहानी को पटकथा (Screen Play) में। इसी प्रकार नाटक में भी यदि नये नाटक का निर्माण किया जा रहा है तो किसी विचार, घटना या कहानी का नाट्य रूपांतरण किया जाता है। यह विकास की प्रक्रिया होती है जो फ़िल्म और नाटक दोनों में समान है। हम यहाँ पर विकास प्रक्रिया की बात कर रहे हैं न कि फ़िल्म की पटकथा और नाटक लिखने के तरीके की।

“वस्तुतः लिखित रूप में नाटक की स्थिति वही है जो किसी फ़िल्म के लिए सिनेरियो या मकान के लिए ब्लू प्रिंट की होती है।”

फ़िल्म की स्क्रिप्ट को पर्दे पर जीवंत बनाने के लिए उसे पटकथा में और नाट्यालेख को मंच पर प्रदर्शन के उपयुक्त बनाने के लिए उसे नाटक में रूपांतरित किया जाता है।रूपांतरण की इस पूरी प्रक्रिया में निर्देशक की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। शुरुआत में सारा कार्य लेखक का होता है लेकिन दोनों (पटकथा और नाटक) के अंतिम ड्राफ्ट निर्देशक और लेखक की आपसी सोच-समझ का नतीजा होता है। लेखक एक तरह से कच्चा माल प्रस्तुत करते हैं जिसको वास्तविक स्वरुप निर्देशक के निर्देशन से मिलता है।

पेशेवर निर्देशक या तो स्वयं स्क्रिप्ट को स्वीकृति प्रदान करते हैं या फिर प्रोड्यूसर द्वारा अनुबंधित किए जाते हैं । परंतु ज़्यादातर निर्देशक उसी स्क्रिप्ट का चयन करते है जो उन्हे सबसे ज्यादा बेहतर लगती है । विचार और नजरिया ही वो सबसे आम

तत्व हैं जो निर्देशकों को उत्तेजित करता है।

अब हम संक्षेप में रंगमंच व सिनेमा के संपूर्ण निर्माण प्रक्रिया में निर्देशकीय अंतःसंबंध पर पुनः गौर करते हुए निर्देशन की भूमिका के बारे में बिंदुवार चर्चा करेंगे.

- नाट्यालेख या पटकथा के विश्लेषण पर निर्णय लेना
- नाटक या फ़िल्म के सभी पहलुओं : कथानक, चरित्र, मिजाज, लय, फॉर्म आदि को नाट्यालेख और प्रस्तुति आलेख दोनों के संदर्भ मे मनोविश्लेषित करना।
- देशकाल, और वातावरण को लेकर शोध करना
- अभिनेताओं को चयनित करना
- प्रोडक्सन को डिजाइन करने में अन्य फ़िल्म या थिएटर के कलाकारों के साथ कार्य करना
- विन्यासकर्ताओं और अन्य विभाग तक कलात्मक दृष्टिकोण को संप्रेषित करना
- अभिनेताओं को अभ्यास करना [रिहर्सल]
- सभी एलीमेंट्स : स्क्रिप्ट, अभिनेता, मंच, कास्ट्यूम, प्रकाश, ध्वनि,और संगीत आदि को एक पूर्ण प्रस्तुति मे समन्वयित करना।

विचार और दृश्य का एकीकरण निर्देशक पर निर्भर करता है और यही सबसे बेहतर परिणाम देता है । यह निर्देशकीय अवधारणा कहलाती है जिसमे निम्न बातें सम्मिलित होती हैं :-

समय देश-काल
मुख्य घटक / नियंत्रक दृश्य/ मेटाफर
उद्देश्य / संकल्पना

हरोल्ड क्लूर्मन [1901-1980] के अनुसार निर्देशक नाटक की रीढ़ को खोजने का प्रयास करता है,'थ्रूलाइन', मेन एक्शन जो पूरे नाटक को प्रोत्साहित करता है। यही बात फिल्मों पर भी लागू होती है.

स्तानिलाव्स्की इसे 'सुपर ओब्जेक्टिव' संबोधित करते है।

किसी भी नाटक/फ़िल्म में विन्यास बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। दोनों ही में विन्यास हेतु एक विन्यासिक दृष्टि कार्य करती है जो की एक निर्देशक की होती है। निर्देशक अंतःप्रेरणा से विन्यास के बारे में सोचता है। यहाँ पर विन्यासकर्ता का कार्य होता है परंतु उसके विन्यास में निर्देशक की ही अंतर्दृष्टि कार्य करती है।

निर्देशक सभी कलात्मक तत्वों को समायोजित करने के लिए कांसेप्ट मीटिंग रखता है। निर्देशक विन्यासकर्ताओं को नए नए आइडयाज प्राप्त करने में मदद करता है ,और इस बात का ध्यान रखता है कि विन्यास नाटक या फ़िल्म के इंटरप्रेटेशन को बदल न दे। इसीलिए वो कोंसेप्ट मीटिंग्स में सभी विन्यासकर्ताओं तक नाटक या फ़िल्म के कोंसेप्ट को रख कर उनकी मदद करता है।

इसके अलावा निर्देशक अलग अलग विन्यासकर्ताओं के डिजाइन्स के अलग अलग इंटरप्रेटेशन को एक सिंगल फोकस मे लाता है ।दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि विविधता मे एकात्मता लाता है और इस प्रकार लाता है कि उस एकात्मता में विविधता दिखे।

इस प्रकार डिजाइन के स्तर पर निर्देशक की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण होती है।

मंचीय कार्यव्यापार व फ़िल्म की शूटिंग के दौरान कोई विशेष एक्शन करना हो तो उसकी डिटेलिंग का कार्य निर्देशक का ही होता है। इसमे निर्देशक विजुयल कंपोजिसन तथा पिक्चराइजेशन में मूवमेंट, रिदम और पेस को बनाए रखने की कोशिश करता है। यहाँ पर निर्देशक की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है।

निर्देशन में दो महत्वपूर्ण आधारभूत तत्व होता है :-

पहला – तैयार प्रोडक्शन में एकात्म दृष्टिकोण[unified vision] को लाना।

दूसरा – सभी अवयवो को इसके अंतिम वास्तविकता [Ultimate Reality]की ओर ले जाना।

इस प्रकार हम देख सकते है कि रंगमंच व सिनेमा दोनों में निर्देशक की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण होती है। निर्देशक का नाट्यप्रस्तुति व फ़िल्म निर्माण के सभी चरणो में सक्रिय और अति-विशिष्ट भूमिका होती है। नाट्य प्रस्तुति/ फ़िल्म निर्माण कई अवयवो से मिलकर तैयार होती है । ये अवयव बिखरे हुए होते हैं। निर्देशक इन सभी अवयवो को समायोजित कर एक विविधतापूर्ण एकात्मता वाला नाट्य प्रस्तुति या सिनेमा दर्शकों के सामने लाता है।

उपरोक्त प्रक्रिया विश्लेषण व रंगमंच और सिनेमा के एकल अध्ययन से दोनों ही विधाओं में संबंध का पता चलता है। अतः इन संबंधों के आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि सिनेमा और रंगमंच के निर्देशन में अंतःसंबंध है।

संदर्भ सूची:-

1. राजहंस रमेश, नाट्य प्रस्तुति एक परिचय, पृष्ठ 25
2. सिन्हा कुलदीप, फ़िल्म निर्देशन, पृष्ठ 14
3. चातक डॉ. गोविंद , रंगमंच: कला और दृष्टि, पृष्ठ 16
4. राजहंस रमेश, नाट्य प्रस्तुति: एक परिचय, पृष्ठ 30
5. राजहंस रमेश, नाट्य प्रस्तुति: एक परिचय, पृष्ठ 32
6. राजहंस रमेश, नाट्य प्रस्तुति: एक परिचय, पृष्ठ 27
7. रस्तोगी गिरीश, रंगभाषा, पृष्ठ 133
8. राजहंस रमेश, नाट्य प्रस्तुति: एक परिचय, पृष्ठ 26
9. रंग प्रसंग, अप्रैल-जून 2005, पृष्ठ 29
10. सिन्हा कुलदीप, फ़िल्म निर्देशन, पृष्ठ 21
11. रस्तोगी गिरीश, रंगभाषा, पृष्ठ 128
12. रंग-प्रसंग, अप्रैल-जून 2005 वर्ष 8 अंक 2, पृष्ठ 63